Sumangalam Prabha
A peer reviewed (Refereed) & open access journal
RNI N0.- UPHIN/2009/31180
PP.No.: 04-06

ISSN: 2250-1894
Vol.-15, No.-IV, Issus-60
Year: Jan-Mar 2025

वैदिक काल में वेध–परम्परा से मुहूर्त ज्ञान तथा सम्प्रति उपादेयता

डॉ0 अनिल कुमार पोरवाल
ज्योतिर्विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

वेदोक्त गर्भाधानादिक संस्कार, गृहारम्भ, यात्रादि शुभाशुभ कार्यरूपी यज्ञों के निष्पादन हेतु जिस काल विशेष का आनयन किया जाता है, वही दिवस शुद्धि के रूप में मुहूर्त कहलाता है। वैदिक कोश[1] में मुहूर्त शब्द को परिभाषित करते हुए कहा गया है– "मुहूर्तम् एवैः अयनैः अवनैः वा।" (मुहूर्त अयन तथा अवन अर्थों में बना है)। इ (जाना)+ल्युट् =अयन। अव(कान्त्यर्थक)+ल्युट्=अवन, इ(गत्यर्थक)+अच= एव। अर्थात् मुहूर्त वह है जो गमनशील हो या रक्षा करने वाला हो या सुन्दर हो। प्रकारान्तर से मुहुः+ऋतुः = मुहूर्तः (बार–बार आने वाला काल)। ऋग्वेद के तृतीय मण्डल में मुहूर्त के सन्दर्भ में कहा गया है– 'ऋतावरीरूप मुहूर्तमेवैः।[2]' बार–बार ऋत अर्थात् सत्य का ज्ञान ही मुहूर्त है। यहाँ यह प्रश्न उठता है कि सत्य क्या है? अद्वैत वेदान्त में सत्य को परिभाषित करते हुए कहा गया है– "ब्रह्मं सत्यं जगन्मिथ्या।[3]" अर्थात् ब्रह्म ही सत्य है। दर्शनशास्त्र में ब्रह्म का अनेकानेक प्रकार से दार्शनिक विवेचन किया गया है किन्तु यदि ब्रह्म को ज्योतिषीय दृष्टि से विचार करें तो वह काल (समय) का ही एक अवयव स्वरूप है जो समय के एक परिमाण का बोध करवाता है। जैसा कि सिद्धान्त शिरोमणि में कहा गया है–

मनुः क्षमानगैयुर्गैर्युगेन्दुभिश्च तैर्भवेत्।
दिनं सरोजजन्मनो निशा च तत्प्रमाणिका।।
ससन्धयः स्युर्मनूनां कृताब्दैः समा आदिमध्यावसानेषु तैर्मिश्रितैः।
स्याद्युगानां सहस्रं दिनं वेधसः सोऽपि कल्पो द्युरात्रन्तु कल्पद्वयम्।।
शतायु शतानन्दः एवं प्रदिष्टः तदायुर्महाकल्प इत्युक्तमाद्यै।[4]

श्रीमद्भगवद्गीता के अष्टम अध्याय में कहा गया है कि "अक्षरं ब्रह्म परमं।[5]" जो अविनाशी और नित्य है वह ही ब्रह्म है। भगवद्गीता में यह भी वर्णित है कि ब्रह्मा के दिन के आरम्भ से अव्यक्त अक्षर ब्रह्म (अर्थात् आदि प्रकृति) से सारा जगत् उत्पन्न होता है और ब्रह्मा जी की रात्रि के आने पर जगत् उस अव्यक्त में ही विलीन हो जाता है।[6] अर्थात् श्रीमद्भगवद्गीता भी प्रत्यक्षाप्रत्यक्ष रूप से ब्रह्म के कालरूपी स्वरूप को ही वर्णित करता है। इसी तथ्य की परिपुष्टि करते हुए श्रीमद्भास्कराचार्य जी ने सिद्धान्त शिरोमणि के गणिताध्याय में उल्लेख किया है– 'यतः सृष्टिरेषां दिनादौ दिनान्ते लयः।[7]' अतः ब्रह्म सदृश काल रूपी सत्य का ज्ञान सदैव ही अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय रहा है। इसीलिए कालविधानक शास्त्र ज्योतिषशास्त्र की उपयोगिता तथा प्रासंगिकता वैदिक समय से ही अपरिहार्य रही है। जैसा कि वेदा ज्योतिष में अन्तर्निहित आर्च ज्योतिष में उल्लिखित है–

वेदा हि यथार्थमभिप्रवृत्ताः कालानुपूर्व्या विहिताच यज्ञाः।
तस्मादिदं कालविधानशास्त्रं यो ज्योतिषं वेद स वेद यज्ञान्।।[8]

षडवेदांगो में ज्योतिषशास्त्र को मुख्यता प्रदान करते हुए चक्षुस्थानीय कहा गया है और उसकी उपयोगिता को सिद्ध करते हुए भास्कराचार्य जी कहते हैं कि कर्ण, नासिकादि अंगो में यदि चक्षु न हो तो शेष अंगो के होने पर भी कुछ नहीं होने के तुल्य है।यथोक्तम्–

वेदचक्षुः किलेदं स्मृतं ज्यौतिषं मुख्यता चाऽङ्गमध्येऽस्य तेनोच्यते।
संयुतोऽपीतरैः कर्णनासादिभिश्चक्षुषाऽङ्गन हीनो न किंचितकरः।।[9]

सिद्धान्त–संहिता–होरा त्रिस्कन्धत्रयात्मक[10] ज्योतिषशास्त्र की कालगणना में 'मुहूर्त' शब्द विशिष्टातिविशिष्ट कार्य रूपी यज्ञों के सम्पादन हेतु महत्त्वपूर्ण अवयव है जो त्रिस्कन्ध ज्योतिष के सिद्धान्त तथा संहितास्कन्ध से प्रत्यक्षतः से प्रत्यक्षतः सम्बन्ध रखता है। क्योंकि जहाँ सिद्धान्त ग्रन्थों की सहायता से मुहूर्त का गणितीय ज्ञान प्राप्त होता है वहीं संहिता ग्रन्थों में तत्तद् मुहूर्तो के फल–कथन का उल्लेख किया गया है। आचार्य लगध ने वेदाऽङ्ग ज्योतिष में मुहूर्त के परिमाण को उपस्थापित करते हुए कहते हैं–

कलादश सविंशा स्याद्व द्वे मुहूर्तस्य नाडिके।
द्युस्त्रिंशत् तत्कलानां तु षट्शती त्र्यधिका भवेत्।।[11]

अर्थात् 2 नाडिकाएँ = 1 मुहूर्त, 30 मुहूर्त = 1 दिन, 60 कलाएँ = 1 अहोरात्र।

श्रीमद्भास्कराचार्य जी ने भी कालमानाध्याय में मुहूर्त के मान को वर्णित करते हुए लिखा है–

निमेषैधृतिभिच काष्ठा तत्त्रिंशता सद्गणकैः कलोक्ता।
त्रिंशत्कलाक्षीं घटिका क्षणः स्याद् नाड़ीद्वयं...... ।।[12]

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

Sumangalam Prabha
A peer reviewed (Refereed) & open access journal
RNI N0.- UPHIN/2009/31180

ISSN: 2250-1894
Vol.-15, No.-IV, Issus-60
Year: Jan-Mar 2025

इस प्रकार 18 निमेष = एक काष्ठा, 30 काष्ठा = एक कला, 30 कला = एक घटी और दो घटी = एक मुहूर्त अथवा क्षण कहा गया है।

कौटिल्य अर्थशास्त्र में भी आया है– "द्वौ त्रुटौ लवः। द्वौ लवौ निमेषः। पञ्च निमेषाः काष्ठा। त्रिशंत् काष्ठारू कला। चत्वारिंशत्कलाः नाडिका। द्विनालिको मुहूर्तः। पञ्चदश मुहूर्तो दिवसो रात्रिश्च।[13]"

अमरकोष के अनुसार, 30 कलाओं का एक क्षण तथा बारह क्षणों का एक मुहूर्त होता है– तास्तु त्रिंशत्क्षणस्ते तु मुहूर्तो द्वादशास्त्रियाम्।[14] इसी क्रम में मनुस्मृति में कालबोधचक्रान्तर्गत मुहूर्त का परिमाण 30 कलाओं के तुल्य ही कहा गया है–

निमेषा दशचाष्टौ च काष्ठा त्रिंशतु ताः कला।
त्रिंशत्कला मुहूर्तः स्यादहोरात्रं तु तावतः।।[15]

इस प्रकार गणित के माध्यम से प्राप्त तिथि–वार–नक्षत्र–करण–योग इन पञ्चांग के सामन्जस्य से ज्ञात विशेषकाल रूपी मुहूर्त विशिष्ट कार्य की सिद्धि हेतु अभीष्ट होता है।

यों तो ज्योतिषशास्त्र के परवर्ती संहिता ग्रन्थों में अनेक प्रकार के मुहूर्तों की स्थिति, आनयन तथा उनके फलों का सविस्तार वर्णन प्राप्त होता है। किन्तु वैदिक तथा वेदा ▪ काल में प्राप्त आर्थवण ज्योतिष की विषय वस्तु अर्वाचीन काल में भी प्रासंगिक जान पड़ती है। इस ग्रन्थ का आरम्भ ही महर्षि काश्यप की जिज्ञासा के फलस्वरूप 'मुहूर्तचिन्तन' से आरम्भ होता है। यथोक्तम्–

किम्प्रमाणां मुहर्त्तानां रात्रौ वा यदि वा दिवा।
चन्द्रादित्यगतं सर्वे तन्मे प्रब्रूहि प्रच्छतः।।[16]

महर्षि काश्यप के मुहूर्त सम्बन्धी प्रश्न का उत्तर देते हुए पितामह ब्रह्म कहते हैं–

द्वादशाक्षिनिमेषस्तु लवो नामाभिधीयते।
लवस्त्रिंशत् कला ज्ञेया कला त्रिंशत् त्रुटिर्भवेत्।।
त्रुटीनान्तु भवेत त्रिंशन्मुहूर्तस्य प्रयोजनम्।[17]

आँखों की पलकों का जितनी देर में बारह बार अनवरत रूप से झपकने में जो समय लगता है उसे 'लव' संज्ञा से अभिहित किया जाता है। ऐसे तीस लव (12•30 =360अक्षनिमेष) के तुल्य एक कला होती है तथा तीस कला के तुल्य काल को त्रुटि कहते हैं और तीस त्रुटियों के समय के तुल्य एक मुहूर्त का मान होता है।

पूर्व में कथित उक्ति से स्पष्ट है कि एक अहोरात्र में मुहूर्तों की सङ्ख्या 30 होती है, 15 मुहूर्त दिवसकाल (दिन दिनेशस्य यत्रोऽत्रदर्शने18) तथा 15 मुहूर्त रात्रिकाल (तमी तमोहन्तुरदर्शन सती19) में होते हैं। जिनके ज्ञान हेतु आर्थवण ज्योतिष में द्वादशाङ्गुल शङ्कु को समतल भूमि पर सीधा स्थापित करके उसकी छाया के परिमाण के अनुसार अर्थात् छाया–परिमाण के आधार पर किया जाता है–

द्वादशाङ्गुलमुच्छेषं तस्य छायाप्रमाणतः।[20]

द्वादशाङ्गुल शङ्कु की छाया को आधार बनाकर मुहूर्त आदि काल–प्रमाण का ज्ञान प्राप्त करने की यह परम्परा ज्योतिषशास्त्र की मौलिक तथा आधारभूत परम्परा प्रतीत होती है क्योंकि सूर्यसिद्धान्तादि ग्रन्थों में भी द्वादशाङ्गुल शङ्कु की छाया से ही दिक्साधन, पलभा, अक्षांशादि आनयन किया जाता है। सूर्यसिद्धान्त के त्रिप्रश्नाधिकारान्तर्गत दिक्साधन में शङ्कु के सन्दर्भ में उल्लिखित है–

तन्मध्ये स्थापयेच्छङ्कुं कल्पना द्वादशाङ्गुलम्।[21]

शङ्कु के आकार तथा उसके प्रयोग के सन्दर्भ में सिद्धान्त शिरोमणि के यन्त्राध्याय में भी वर्णन प्राप्त होता है–

समतलमस्तकपरिधिः भ्रमसिद्धो दन्तिदन्तजः शङ्कुरू।
तच्छायातः प्रोक्तं ज्ञानं दिग्देशकालानाम्।।[22]

द्वादशाङ्गुल–शङ्कु की छाया के विविध परिमाणों के आधार पर जिन मुहूर्तों का उल्लेख आर्थवण ज्योतिष में प्राप्त होता है वह काल–परिमाण वेदाऽङ्ग ज्योतिष अर्थात् ऋग्यजुर्वेद–ज्योतिष से भिन्न प्रतीत होता है।

आथर्वण ज्योतिष के अनुसार प्रातः काल सन्धिबेला में समतल भूमि पर स्थापित द्वादशाङ्गुल शङ्कु की छाया पश्चिम दिशा में जब 96 अङ्गुल के समान हो तो 'रौद्र' संज्ञक मुहूर्त, 60 अङ्गुल होने पर 'श्वेत' संज्ञक मुहूर्त, 12 अङ्गुल होने पर 'मैत्र' नामक मुहूर्त, 6 अङ्गुल होने पर 'सारभाट संज्ञक' मुहूर्त, 5 अङ्गुल होने पर 'सावित्र संज्ञक', 4 अङ्गुल परिमाण होने पर 'वैराज' नामक मुहूर्त, 3 अङ्गुल होने पर 'विश्वावसु संज्ञक' मुहूर्त

होता है। इसके पश्चात् मध्याह्न में जिस समय छाया का परिमाण उस द्वादशाङ्गुल शङ्कु के मूल में प्रतिष्ठित हो जाता है अर्थात् जिस समय शङ्कु की छाया उसी के मूल में आ जाने के कारण नही दिखती है तो वह शङ्कु के मूल में परितः विराजमान होती है उस समय अभिजित संज्ञक मुहूर्त होता है।

मध्याह्न के पश्चात् उपर्युक्त छाया के उत्क्रम में मुहूर्तों का ज्ञान किया जाता है। अतः मध्याह्न के पश्चात् सूर्य के पश्चिम दिशा में आ जाने पर सूर्य की वैगामिनी छाया पूर्वान्मुख होकर उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होने लगती है उस समय शङ्कु मूल से पूर्वोन्मुखी तीन अङ्गुल की छाया पर्यन्त रोहिण नामक मुहूर्त, तीन से चार अङ्गुल से अधिक पाँच अङ्गुल छाया पर्यन्त विजय नामक मुहूर्त, पाँच से छः अङ्गुल पर्यन्त नैऋत नामक मुहूर्त, छः से बारह अङ्गुल पर्यन्त वारुण संज्ञक मुहूर्त, 12 से 60 अङ्गुल पर्यन्त सौम्य नामक मुहूर्त तथा इससे अधिक अर्थात् 60 अङ्गुल की पूर्वोन्मुखी छाया के अनन्तर सूर्यास्त पर्यन्त भग नामक मुहूर्त होता है।

रौद्र से लेकर भग पर्यन्त यह जो दश, दो और तीन अर्थात् पन्द्रह मुहूर्त व्याख्यात किए गए हैं वह प्रातःकाल अर्थात् सूर्योदय से सूर्यास्त पर्यन्त दिवस–मात्र को दृष्टि में रखकर ही वर्णित हैं। रात्रि में भी दिवस–परिमाणवत् पूर्वोक्त क्रम में विदित किए जा सकने योग्य उपर्युक्त रौद्रादि पन्द्रह मुहूर्त यथाक्रम में होते हैं, इसमें लेशमात्र भी संशय नही है। यथोक्तम्–

एते मुहूर्ता व्याख्याता दश–द्वौ च त्रयः।
अहन्येव तु विज्ञेया रात्रावपि न संशयः।।[25]

शङ्कुच्छाया के अतिरिक्त सम्पूर्ण दिनमान अथवा रात्रिमान को 15 से विभक्त करके दिन अथवा रात्रि के मुहूर्त परिमाण को घटी, पल अथवा घण्टा, मिनट में ज्ञात करके यथाक्रम 15 मुहूर्तों का सम्यक् ज्ञान किया जा सकता है। किन्तु द्वादशाङ्गुल शङ्कु परम्परा से आनयन कर प्राप्त मुहूर्त परिमाण वेध सिद्ध होने से दृग्गणित (दृक्सिद्ध) होंगे। अतः यह विधि पूर्ण रूप से दृग्गणित परम्परा का अनुपालन करती है। इस सन्दर्भ में भास्कराचार्य जी का कथन है–

यात्राविवाहोत्सवजातकादौ खेटैः स्फुटैरेव फलस्फुटत्वम्।
स्यात् प्रोच्यते तेन नभश्चराणां स्फुटक्रिया दृग्गणितैक्यकृद्या ।।[26]

अतः ज्योतिषशास्त्र के सभी विद्वानों ने दृग्गणित परम्परा को सदैव ही अनुकरणीय बतलाया है, जिससे शङ्कु द्वारा प्राप्त मुहूर्त सम्प्रतिकाल में उतने ही शुद्ध प्राप्त होते हैं जितने कि वैदिक अथवा वेदा ▪ काल में। इस प्रकार से, वैदिक काल से लेकर सम्प्रतिकाल में वेध–परम्परा को महत्त्व दिया जाता रहा है, जिससे गणितागत प्राप्त कालादिमान दृश्य हो जाते हैं। अतः वेदों में उल्लिखित शङ्कु मान से मुहूर्त ज्ञान की परम्परा उपादेय सम्प्रति काल में स्वयं सिद्ध है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. वैदिक कोश,
2. ऋग्वेद, 3.33.5
3. अद्वैत वेदान्त
4. सिद्धान्त शिरोमणि (गणिताध्याय), कालमानाध्याय, श्लोक 23–25
5. श्रीमद्भगवद्गीता–8/03
6. अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे। रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवात्यक्त संज्ञके।। (श्रीमद्भगवद्गीता–8/18)
7. सिद्धान्त शिरोमणि (गणिताध्याय), कालमानाध्याय, श्लोक–27
8. आर्च ज्योतिष, श्लोक–36
9. सिद्धान्त शिरोमणि (गणिताध्याय), कालमानाध्याय, श्लोक–11
10. सिद्धान्त–संहिता–होरा रूपं स्कन्धत्रयात्मकम्।नारद संहिता–1/4
11. याजुषज्योतिष, श्लोक–38
12. सिद्धान्त शिरोमणि (गणिताध्याय), मध्यमाधिकार, कालमानाध्याय, श्लोक 16–17
13. कौटिल्य अर्थशास्त्र– प्रकरण–36, अध्याय –20
14. अमरकोषः, प्रथम काण्ड, कालवर्ग, श्लोक 11
15. मनुस्मृति, अध्याय–1, श्लोक 64
16. आर्थवण ज्योतिषम्, प्रकरण–1, श्लोक 2
17. आर्थवण ज्योतिषम्, प्रकरण–1, श्लोक 4–5
18. सिद्धान्त शिरोमणि (गोलाध्याय), त्रिप्रश्नवासना, श्लोक–10
19. तदैव
20. आथर्वण ज्योतिषम्, प्रकरण–1, श्लोक 5
21. सूर्यसिद्धान्त, त्रिप्रश्नाधिकार, श्लोक–2
22. सिद्धान्तशिरोमणि (गोलाध्याय), यन्त्राध्याय, श्लोक–9
23. आथर्वण ज्योतिषम्, प्रकरण–1, श्लोक 6–8
24. आथर्वण ज्योतिषम्, प्रकरण–1, श्लोक 9–10
25. आथर्वण ज्योतिषम्, प्रकरण–1, श्लोक 11

26. सिद्धान्त शिरोमणि (गणिताध्याय), स्पष्टाधिकार, श्लोक–1